RNI 26281/74 रजि.नं. पी.बी./जे.एल.-011/2018-20

ओ३म्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्ष: 45, अंक : 27 एक प्रति 2 : रुपये

कुल पृष्ठ : 8

रविवार 27 सितम्बर, 2020

विक्रमी सम्वत् 2077, सृष्टि सम्वत् 1960853121

दयानन्दाब्द : 196 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये

आजीवन शुल्क : 1000 रुपये

दूरभाष : 0181-2292926, 5062726

E-mail: apspunjab2010@gmail.com,

www.aryapratinidhisabha.org

वर्ष–45, अंक : 27, 24-27 सितम्बर 2020 तदनुसार 12 आश्विन, सम्वत् 2077 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

स्त्री की अनुकूलता से भला

ले०-स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

सूर्यो देवीमुषसं रोचमानां मर्यो न योषामभ्येति पश्चात्।
यत्रा नरो देवयन्तो युगानि वितन्वते प्रति भद्राय भद्रम्।।

-ऋ. १।११५।२

शब्दार्थ-न = जिस प्रकार **मर्यः** = मनुष्य **रोचमानाम्** = प्रसन्नचित्त **योषाम्+अभि** = स्त्री को लक्ष्य करके **पश्चात्** = पीछे **एति** = आता है, ऐसे ही **सूर्यः** = सूर्य **देवीम्** = प्रकाशवती **उषसम्** = उषा के पीछे आता है। **यत्र** = इस प्रकार **देवयन्तः** = सुखाभिलाषी **नरः** = मनुष्य **भद्राय** = भद्र के **प्रति** = बदले **भद्रम्** = भद्र को संयुक्त करते हुए **युगानि** = जोड़े **वितन्वते** = बनाते हैं।

व्याख्या-किसी कवि ने कहा है-**'अविभिद्य निशाकृतं तमः प्रभया नांशुमताप्यु-दीयते'** = रात्रि के किये अन्धकार का प्रभात-प्रकाश से नाश हुए बिना सूर्य भी उदय नहीं होता। यह विचार वेद से ही अन्यत्र गया है। वेद में कहा है-**'सूर्यो देवीमुषसं... अभ्येति पश्चात्'** = सूर्य प्रकाशमयी उषा के पीछे आता है, अर्थात् सूर्य को अपने लिए उषा की आवश्यकता है और उषा आगे आती है, सूर्य पीछे-पीछे चलता है। वेद ने इस दार्ष्टान्त को दृष्टान्त बनाकर और स्त्री-पुरुषों के व्यवहार-रूप दार्ष्टान्त को दृष्टान्त बनाकर विवाह के गौरव को बहुत बढ़ा दिया है। वेद कहता है, उषा के पीछे आता हुआ सूर्य पत्नी के पीछे चलने वाले पति का अनुकरण कर रहा है। इस काव्यमयी भाषा में पति को पत्नी के अनुकूल चलने का उपदेश है। मनु महाराज ने [३।६१-६२] लिखा है-

यदि हि स्त्री न रोचेत पुमांसं न प्रमोदयेत्।
अप्रमोदात् पुनः पुंसः प्रजनं न प्रवर्त्तते।।
स्त्रियां तु रोचमानायां सर्वं तद्रोचते कुलम्।
तस्यां त्वरोचमानायां सर्वमेव न रोचते।।

यदि स्त्री पुरुष को नहीं रुचती, तो पुरुष को प्रसन्न नहीं कर सकती। पुरुष के प्रसन्न न होने पर सन्तानोत्पादन की भावना ही प्रवृत्त नहीं होती। स्त्री के रुचने पर सब परिवार प्रसन्न होता है, उसके न रुचने पर सभी परिवार प्रसन्नतारहित हो जाता है।

वेद ने पुरुष को **'रोचमाना योषा'** के अनुकूल चलने को कहा। मनुजी ने 'रोचमाना स्त्री' के कारण सभी परिवार को रोचमान बताया है। स्त्री पुरुष को रुचे और पुरुष उसके अनुकूल चले, तभी गृहस्थी सुखदायिनी होती है, अन्यथा गृहस्थाश्रम क्लेशागार बन जाता है। गृहस्थी को सुखमयी बनाने के लिए पति-पत्नी की पारस्परिक प्रसन्नता और अनुकूलता साधन है। **'युगानि वितन्वते प्रति भद्राय भद्रम्'** के द्वारा वेद ने समानगुण-कर्म-स्वभाव वालों के जोड़े बनाने का आदेश किया है। गृहस्थाश्रम चलाने के लिए स्त्री-पुरुषों के युग=जोड़े तो बनेंगे ही, उनके बिना गृहस्थाश्रम बन ही नहीं सकता, किन्तु यह 'प्रति भद्राय भद्रम्' को सामने रखकर होना चाहिए। स्त्री का मान, गृहस्थ में स्त्री की अनुकूलता, समान गुण-स्वभाव का विचार करके विवाह करना केवल वैदिक धर्म की विशेषता है।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

भद्राहं नो मध्यन्दिने भद्राहं सायमस्तु नः।
भद्राहं नो अह्नां प्राता रात्री भद्राहमस्तु नः।।

-अथर्व. ६.१२८.२

भावार्थ-हे दयामय परमात्मन्! आपकी कृपा से हमारे लिए प्रातः काल, मध्याह्नकाल, सायंकाल और रात्रिकाल शुभ हों, अर्थात् सब काल में हम सुखी हों और आपको सदा स्मरण करते या आपकी वैदिक आज्ञा का पालन करते हुए पवित्रात्मा बनें, कभी आपको भूलकर आपकी आज्ञा के विरुद्ध चलने वाले न बनें और अपने समय को व्यर्थ न खोएँ। ऐसी हमारी प्रार्थना को आप कृपा कर स्वीकार करें।

धाता दधातु नो रयिमीशानो जगतस्पतिः
स नः पूर्णेन यच्छतु।।

-अथर्व. ७.१७.१

भावार्थ-हे सर्वजगत् धारक परमात्मन्! हम आर्य लोग जो आपकी सदा से कृपा के पात्र रहे हैं जिन पर आपकी सदा कृपा बनी रही है ऐसे आपके प्यारे पुत्रों को विद्या, स्वर्ण, रजत, हीरे, मोती आदि धन प्रदान करें, क्योंकि आप महा समर्थ और शरणागतों के सब मनोरथों को पूर्ण करने वाले हैं, हम भी आपकी शरण में आये हैं, इसलिए आप सबके स्वामी हमको पूर्ण धनी बनाओ, जिससे हम किसी पदार्थ की न्यूनता से कभी दुःखी वा पराधीन न होवें, किन्तु सदा सुखी हुए आपके ध्यान में तत्पर रहें।

यो अग्नौ रुद्रो यो अप्स्वन्तर्य ओषधीर्वीरुध आविवेश।
य इमा विश्वा भुवनानि चाक्लृपे तस्मै रुद्राय नमो अस्त्वग्नये।।

-अथर्व. ७.८७.१

भावार्थ-हे दुष्टों को रुलाने वाले रुद्र प्रभो! आप अग्नि जल और अनेक प्रकार की औषधियों में प्रविष्ट हो रहे हैं और आप चराचर सब भूतों के उत्पन्न करने में महा समर्थ हैं, इसलिए सर्वजगत् के स्रष्टा और सब में प्रविष्ट ज्ञान स्वरूप ज्ञानप्रद आप रुद्र भगवान् को हम बारम्बार सविनय प्रणाम करते हैं, कृपा करके इस प्रणाम को स्वीकार करें।

त्रैतवाद के पोषक–महर्षि दयानन्द सरस्वती

ले.-पं. उम्मेद सिंह विशारद वैदिक प्रचारक गढ़निवास मोहकमपुर देहरादून (उत्तराखण्ड)

आत्मा और ईश्वर के दो तत्वों के अतिरिक्त 'भौतिक द्रव्य' एक तीसरा तत्व है, इसलिए वैज्ञानिक दृष्टि से यह विचार करना आवश्यक है कि सृष्टि उत्पत्ति में मूल तत्व कितने है। मूलभूत तत्वों के विषय में वैज्ञानिक दृष्टि से मुख्य तौर पर निम्न विचार धाराओं पर विचार किया जाता है।

एकत्ववाद

एकत्ववाद का सिद्धान्त कहता है कि या तो जड़ से ही सृष्टि का निर्माण हुआ है या चेतन से ही सृष्टि का निर्माण हुआ है। अगर जड़ से सृष्टि का निर्माण मानो तो मानना पड़ता है कि भौतिक द्रव्य (प्रकृति) से ही जीवन की उत्पत्ति हुई है। ये लोग जड़ से जीवन की उत्पत्ति मानते है, किन्तु आत्मा-परमात्मा जैसे तत्व नहीं मानते। यह धारणा प्राचीन युग के चार्वाकों ने दी है, वर्तमान युग के जड़वादियों, भौतिक वादियों की है। अगर चेतन से सृष्टि का निर्माण माने तो मानना पड़ता है कि चेतन तत्व से ही भौतिक द्रव्य (प्रकृति) की उत्पत्ति हुई है। ये लोग भौतिक द्रव्य तथा जीवात्मा की पृथक, स्वतन्त्र, अनादि सत्ता नहीं मानते। यह धारणा भारतीय दार्शनिकों में मुख्य तौर पर शंकराचार्य (788-820) के वेदान्त सिद्धान्त के पाश्चात्य दार्शनिकों में मुख्य तौर पर स्पाइनोजा (1632-1677) तथा बर्कले (1685-1753) की और मत वादियों में यहूदी, ईसाई व मुसलमानों की है। यहूदी, ईसाई तथा मुसलमान मानते है कि ईश्वर एक है, उसी ने अभाव से नेस्ति से जगत तथा जीव को उत्पन्न कर दिया। भारत में इस मत के प्रवर्तक आचार्य बृहस्पति माने जाते हैं। चार्वाक का अर्थ है, ''चारु वाक'' मीठी वाणी बोलने वाला। उनका कहना है कि न कोई ईश्वर है, न जीव है, यह देह ही सब कुछ है। देह नष्ट हुआ सब कुछ समाप्त हो गया। मानव देह पृथ्वी, अप, तेज, वायु तत्वों से देह तथा संसार बना है।

प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि जब ये चार तत्वों से जड़ परमाणुओं के मिश्रण से बने है, तब इन जड़ तत्वों के मिश्रण से चेतन तत्व जीव कैसे उत्पन्न हुआ।

चार्वाक का उत्तर-जिस प्रकार दही और गोबर मिला देने से कीड़े उत्पन्न हो जाते है, इसी प्रकार भिन्न-भिन्न परमाणुओं के एक विशेष प्रकार विशेष मात्रा से मिलने से आत्मा उत्पन्न हो जाता है। वर्तमान विज्ञान का उदाहरण लिया जाए तो जैसे हाइड्रोजन तथा आक्सीजन दोनों अदृश्य तत्व है इन दोनों के एक विशेष मात्रा में सम्मिश्रण से जल नामक तत्व उत्पन्न हो जाता है जो इन दोनों से भिन्न है, वैसे ही भिन्न भिन्न जड़ परमाणुओं के मिश्रण से उनसे भिन्न भिन्न तत्व उत्पन्न हो जाता है। उत्तर है कि दही और गोबर को तथा हाईड्रोजन तथा आक्सीजन को तो मिलाने वाली दूसरी चेतन हस्ती होती है। कलेवर बढ़ने के कारण एकत्ववाद को यहीं विराम देते है।

द्वैतवाद

द्वैतवाद का सिद्धान्त यह है कि मूलभूत सत्ताऐं दो हैं-जीव तथा प्रकृति। यह धारणा सांख्य दर्शन की कही जाती है। सांख्य दर्शन के रचयिता महर्षि कपिल थे। सांख्य दर्शन को निरीश्वर सांख्य कहा जाता है। ऋषि दयानन्द जी ने सांख्य को सेश्वरवादी ही माना है। सांख्य का मुख्य विषय प्रकृति तथा पुरुष जड़ तथा चेतन इन दो तत्वों पर विचार करना है।

भारतीय दर्शन शास्त्र में एकत्ववाद के विरुद्ध सबसे पहले प्रबल आवाज़ सांख्यकार महर्षि कपिल ने उठाई। उनका कहना है कि सृष्टि में अन्तिम सत्ता में एक तत्व मानने से काम नहीं चल सकता। जड़ तथा चेतन दो सत्ताओं को तो मानना ही पड़ेगा तभी सृष्टि उत्पत्ति की समस्या का समाधान हो सकता है। इस विचार को सांख्य दर्शन का प्रकृति पुरुष का सिद्धान्त कहा जाता है। वैदिक संस्कृति के भोक्ता-भोग्य, दृष्टा, दृश्य आदि सिद्धान्तों का प्रारम्भ इसी द्वैतवाद के सिद्धान्त से हुआ है। द्वैतवाद के आचार्यों का मत है एक सत्ता जड़ है दूसरी चेतन। उनका कहना है कि सृष्टि की समस्या को समझने के लिए इन दो को तो मानना ही पड़ेगा। चेतन भी एक की जगह दो है; एक आत्मा दूसरा परमात्मा।

सांख्यमतानुसार जब सतकार्यवाद सिद्ध हो जाता है तब यह मत अपने आप ही गिर जाता है, कि दृश्य सृष्टि की उत्पत्ति शून्य से हुई है अर्थात् जो कुछ है ही नहीं उससे जो अस्तित्व है वह उत्पन्न नहीं हो सकता। इस बात से साफ सिद्ध होता है कि सृष्टि किसी न किसी पदार्थ से उत्पन्न हुई है और इस समय सृष्टि में जो गुण हमें दीख पड़ते है वे ही इस मूल पदार्थ में होने चाहिए। अब यदि हम सृष्टि की ओर देखें तो हम वृक्ष-पशु-मनुष्य, पत्थर-सोना-चांदी, हीरा, जल-वायु अनेक पदार्थ दीख पड़ते हैं, इन सबके रूप तथा गुण भिन्न भिन्न है। सांख्यवादियों का सिद्धान्त है कि यह भिन्नता तथा नानात्व आदि में अर्थात् मूल पदार्थ में तो नहीं दीखता किन्तु मूल में सबका द्रव्य एक ही है। अर्वाचीन रसायन सांख्यओं ने भी भिन्न भिन्न द्रव्यों का पृथककरण करके पहले 62 मूल तत्व फिर 92 और अब 105 ढूंढ़ निकाले थे। अब पश्चिमी विज्ञान वेत्राओं ने भी यह निश्चय कर लिया है कि ये मूल तत्व स्वतन्त्र वा स्वयं सिद्ध नहीं है। इन सबकी जड़ में कोई न कोई एक ही पदार्थ है, उस पदार्थ में जो मूल पृथ्वी तारागण की सृष्टि उत्पन्न हुई है। जगत के सब पदार्थों में जो मूल द्रव्य है उसे ही सांख्य दर्शन में प्रकृति कहते हैं। सांख्यवादियों ने सब पदार्थों का निरीक्षण करके पदार्थों में तीन गुणों को पाया है सत्व, रज तथा तम इसलिए मूल द्रव्य में प्रकृति में भी इन तीन गुणों को मानते हैं। जिसके कारण प्रकृति में नानात्व पाया जाता है, एक प्रकृति से इन तीन गुणों के कारण अनेक पदार्थ उत्पन्न हो जाते हैं। सांख्य का कथन है कि सांसारिक जड़ पदार्थों की मूल सत्ता प्रकृति है। जिस प्रकार सांख्य जड़ प्रकृति को मूल सत्ता मानता है उसी प्रकार चेतन को भी मूल सत्ता मानता है। इसी चेतन को पुरुष, क्षेत्रज्ञ तथा अक्षर कहा गया है।

समीक्षा-हमने देखा भारतीय चिन्तकों में जहां एकत्ववादी थे, वहां द्वित्ववादी भी थे जिनका कहना है कि सृष्टि उत्पक्ति की समस्या सिर्फ एक मूल सत्ता को मानने से हल नहीं होती। चाहे जड़ को मूल सत्ता माने चाहे चेतन को जड़ से चेतन उत्पन्न नहीं हो सकता, न चेतन से जड़ उत्पन्न हो सकता है, क्योंकि यह दोनों तत्व एक दूसरे से भिन्न है। इसलिए इन सब नाना रूपी जड़ रूपों को एक में समाविष्ट कर जड़ प्रकृति का नाम दे दिया गया। वैसे ही चेतन में अल्प चेतन और सर्वज्ञ चेतन ये मूल तत्व भी हो यह तीनों शब्द पिण्ड में आत्मा तथा ब्रह्माण्ड में परमात्मा पर एक समान घटित हो जाते हैं। विचार किया जाता है सांख्य, उपनिषद आदि में ईश्वर जीव प्रकृति इन तीनों मूल सत्ताओं को स्वीकार करते हैं।

त्रैतवाद

त्रैतवाद के सिद्धान्त का प्रतिपादन करने वाले महर्षि दयानन्द सरस्वती जी

त्रैतवाद का सिद्धान्त है कि किसी वस्तु के निर्माण में तीन प्रकार के कारणों का होना आवश्यक है. वे है उपादान कारण, निमित्त कारण तथा साधारण कारण। इन्हें क्रमशः समवायी कारण, निमित्त कारण तथा असमवायी (अकारिक कारण)। उदाहरणार्थ हम घड़े का दृष्टान्त लेते हैं। उपादान या समवायी कारण वह है जिसके बिना घड़ा न बन सके, जो स्वयं रूप बदलकर घड़ा बन जाए। इस परिभाषा से मिट्टी घड़े का उपादान कारण या समवायी कारण हुआ। निमित्त कारण वह है, जिसके बनाने से कुछ न बने, न

(शेष पृष्ठ 7 पर)

सम्पादकीय

वेदों में संगीत विद्या का विवेचन

वेद परमपिता परमात्मा की पवित्र वाणी है। वेदों में सभी सत्य विद्याओं का समावेश है। वेद विद्या से ही मनुष्यों को सत्यासत्य का ज्ञान होता है। परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के आरम्भ में प्राणीमात्र के कल्याणार्थ संविधान के रूप में वेद प्रदान किए हैं। भारतीय धर्म में वेद की इतनी प्रतिष्ठा है कि हर भारतवासी वेदों के प्रति अगाध श्रद्धा रखता है। वेद का आंशिक विरोध भी अपनी संस्कृति में श्रद्धा रखने वाले भारतीय के लिए असह्य है। महर्षि मनु जी महाराज ने वेद की निन्दा करने वाले को नास्तिक कहा है। वेद को मानने वाला तथा तदनुसार आचरण करने वाले व्यक्ति को ही आस्तिक कहा जा सकता है। अन्य ग्रन्थों के अध्ययन की अपेक्षा वेदों का पठन-पाठन अनिवार्य बताया है। वेद का अध्ययन करने वाला व्यक्ति इस संसार में रहते हुए, अपने कर्त्तव्य कर्मों को करता हुआ ब्रह्म का साक्षात्कार करता है। जिसके प्रमाण में महर्षि मनु ने मनुस्मृति के बारहवें अध्याय में लिखा है कि- वेद शास्त्र के तत्व को जानने वाला व्यक्ति जिस किसी आश्रम में निवास करता हुआ कार्य का सम्पादन करता है, वह इसी लोक में रहते हुए भी ब्रह्म का साक्षात्कार करता है।

संगीतकला-: संगीत परमात्मा का ऐसा वरदान है, जिससे प्रकृति में बदलाव आ सकता है, बीभत्सता को पैदा कर सकता है, कई रोगों का निदान कर सकता है। संगीत जनमानस में नई स्फूर्ति एवं नव उत्साह का संचार कर सकता है। प्रवचन की अपेक्षा एक सन्देशात्मक गीत का अधिक प्रभाव पड़ता है। संगीत जन-जन के हृदय में और बुद्धि में विद्युत् की तरह प्रवेश करके अज्ञान को मिटाने का कार्य करता है। बुद्धिहीनों को बौद्धिक बल के द्वारा सबल बना देता है। संगीत के द्वारा सामाजिक कुरीतियों एवं अन्धविश्वासों को दूर किया जा सकता है। देश के नागरिकों में राष्ट्रभक्ति की भावना को जागृत करने के लिए संगीत एक अचूक औषधि है। त्याज्य विषय को भी संगीत के माध्यम से समाज के समक्ष प्रस्तुत किया जाए तो वह सहृदयता से उसे स्वीकार कर लेता है। संगीत अपने रस के द्वारा नीरसता को नष्ट कर देता है। संगीत के निरन्तर प्रवाह के द्वारा व्यक्ति के हृदय से जड़ता समाप्त हो जाती है और साधकों में प्राण और उत्साह को भरकर मार्ग दिखाता है। संगीत का मूल स्रोत वेद है। चारों वेदों में सामवेद को संगीतविद्या का वेद माना गया है। छान्दोग्योपनिषद के अनुसार जैसे वाक्य रचना में छन्द, छन्दों में काव्य, काव्यों में गीत और गीतों तान-संलाप प्रशस्य हैं, वैसे ही समस्त वाङ्मय में वेद, वेदों में सामवेद और सामवेद में उसके सर्वस्वभूत गान प्रशंसित है। सामवेद के उपवेद गान्धर्ववेद में संगीतकला के बारे में विशद विवेचन किया गया है, इसीलिए गान्धर्ववेद को संगीतशास्त्र कहा गया है। गान्धर्ववेद से ही संगीतकला का उद्भव हुआ है। इससे उदात्तादि स्वरों का तथा वीणा और कण्ठ से निकले हुए निषादादि (स,रे,ग,म,प,द,नि) इन सात स्वरों में ताल के साथ गाने का ज्ञान होता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय सम्मुलास में लिखा है कि-गान्धर्ववेद जिसको गान विद्या कहते हैं। उसमें स्वर, राग, रागिनी, समय, ताल, ग्राम, तान, वादित्र, नृत्य, गीत आदि को यथावत् सीखें और नारदसंहिता आदि जो-जो आर्षग्रन्थ हैं, उनको वैरागियों के गर्दभशब्दवत् व्यर्थ आलाप कभी न करें। गान्धर्ववेद का निर्वचन करते हुए कहा गया है कि-गा: धारयति, गिरं संगीतं धारयति, गां वाचं धरतीति वा गन्धर्व:, गन्धर्व: एवं गान्धर्व:। तस्य वेद गान्धर्ववेद:।

कल्पशास्त्र को वेद पुरूष का हस्त कहा गया है-हस्तौ कल्पौ अथ पठयते। कल्पशास्त्र के श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र, धर्मसूत्र, शुल्बसूत्र गृहीत हैं, उसी प्रकार सामवेद के उपवेद गान्धर्ववेद में गीतविद्या, वाद्यविद्या तथा नृत्यविद्या गृहीत हैं। इन तीनों शास्त्रों को मिलाकर संगीतशास्त्र कहते हैं। गान्धर्ववेद को स्वरशास्त्र भी कहा जाता है। वेदार्थ को समझने के लिए स्वरशास्त्र बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। वेद में आई हुई आख्यायिकाओं, गूढ़ तत्वों को तथा वेद प्रतिपाद्य हर विषय को नाटकों के माध्यम से, नृत्य के माध्यम से, गीत के माध्यम से, रस और अभिनयों से, कलाओं से, ध्वनिविशेषों से जनसामान्य तक पहुँचाना, वेदार्थ को हृदयङ्गम कराना, वेद प्रतिपाद्य मुख्य विषय परमात्मा तक पहुँचाने में ही गान्धर्ववेद को उपवेदत्व है।

सामवेद मुख्यत: उपासना का वेद है। परमात्मा के उपासक सामों में ही उसकी स्तुति करते हैं। । सामशब्द का अर्थ है-गान। अत: जैमिनी ऋषि ने गीतिषु सामाख्या कहा है। भरतमुनि कहते हैं कि सामवेद से संगीत ग्रहण करके ब्रह्मा ने नाट्यशास्त्र की रचना की थी (नाट्यशास्त्र १.१७)। सामवेद में उपलब्ध गानविशेषों की संख्या बहुत बड़ी है। उनमें अग्निष्टोम, आग्नेय, इष्टाहोत्रीय, औशनस, कालेय, गायत्र, गौरीवीत, बृहत्, ब्रह्मसाम, यज्ञायज्ञीय, रथन्तर, रैवत, वामदेव्य, वैराज, वैरूप, शाक्कर, शुक्र इत्यादि हैं। सामवेद में कहा गया है कि उपासकों को मित्र के समान प्रिय परमेश्वर की स्तुति करनी चाहिए। इस मन्त्र में आए स्तुषे शब्द का अर्थ है कि तुम स्तुति के गीत गाओ। ऋचाएं भक्तों के भावावेश की स्वर लहरी में जब फूटकर बाहर प्रकट होती हैं तो वे साम (गीति) बन जाती हैं। स्तुति या उपासना और संगीत का गहरा सम्बन्ध है। एक गायक की गाना गाते समय जो मन:स्थिति होती है, ठीक वही स्थिति एक उपासक की उपासना में होनी चाहिए।

वेद और वैदिक साहित्य में संगीत का उल्लेख प्रचुर मात्रा में प्राप्त होता है। ऋग्वेद में गायक के लिए गातुविद् शब्द का प्रयोग हुआ है। ऋग्वेद में गीत के लिए गायत्री शब्द का प्रयोग हुआ है। महर्षि दयानन्द ने ऋग्वेद के मन्त्र का भाष्य करते हुए लिखा है कि-प्राणविद्या को जानने वाले विद्वान् जन सामवेद के गानों से स्तुति करते हुए हम लोगों की रक्षा आदि व्यवहार से समीप आवें और हमें सुख देवे। इससे ज्ञात होता है कि गान्धर्वाचार्यों को सामगानों से लोगों के दु:ख दूर करने का निर्देश है। सामवेद के निर्देशानुसार यजमान को संगीतज्ञ होना चाहिए। ऋग्वेद में कहा गया है कि जैसे तुम जानते हो, वैसे ही आकाश भर में गूंजने वाले सामगान का गान करो। हे उद्गाता! तुम पखेरू के समान सामगान गाते हो, ब्रह्मपुत्र के समान सोमयागादि में विद्यमान प्रात:कालादि सवनों में शंसन करते हो स्तुति करते हो। सामवेद के ५९९ वें मन्त्र में तथा ऋग्वेद के दशमें मण्ड़ल में कहा गया है कि-वसु ब्रह्मचारी तेजस्वी गुरू से और पिता के तुल्य विद्वान् से रथन्तर सामगान का उपदेश ग्रहण करें। धाता, सविता, विष्णु, आदित्यों और अग्नि के ज्ञान का पोषक याज्ञिक बृहत्साम को ग्रहण करता है। विद्वान् जन वेदमन्त्रों से पुष्ट होकर शक्तिशाली महिमामय ऋचाओं में गायत्र सामगान करते हैं। सामगान पवित्र होता है, उस साम को गाकर मनुष्य पवित्र बनता है। विवेकी एवं मेधावी बनने के लिए परमेश्वर की स्तुति करनी चाहिए। ऋषियों की सप्तस्वर (स, रे, ग, म, प, द, नि) युक्त वेदवाणी सोमरूपी परमात्मा की स्तुति करती है। मनुष्य को आत्मकल्याणार्थ परमात्मा के गुणों का गान करना चाहिए, प्रभुप्रदत्त वेदों को गाना चाहिए। ऋग्वेद के १०वें मण्डल में कहा गया है कि मनुष्य अगर दिव्यत्व को प्राप्त करना चाहता है तो उसे संगीत से युक्त वेदज्ञान को प्राप्त करना चाहिए। इसमें वेद की वाणी को सरस्वती नाम से कहा गया है। विशिष्टेन संगीतेन युक्ता सरस्वती-इस व्युत्पत्ति के अनुसार जो विशेष प्रकार के संगीत से युक्त है, वही सरस्वती है। सा रसवती इति सरस्वती- इस व्युपत्ति के अनुसार जो रस से युक्त है, वह सरस्वती है। वेदविद्या रसवती है, परमात्मा का स्वरूप है, आनन्द रस को देने वाली है। जिस प्रकार आनन्द को प्राप्त करके आत्मा आनन्दी हो जाता है, उसी प्रकार संगीत के द्वारा रसयुक्त हुई वेदवाणी से भी प्रजा आनन्दी हो जाती है। मोक्ष को सिद्ध करने वाली स्तुतिविद्या और गान्धर्व (संगीत) विद्या का हम सत्कार करते हैं। जिन दोनों के द्वारा समस्त प्राणी कर्मों में प्रवृत्त होते हैं या कर्मों को करते हैं। ये दोनों विद्यायें संसाररूपी सदन में विराजते हैं। यजमान अपने यज्ञ की रक्षा के लिए पाँच जनों का आह्वान करते हैं। उनमें से एक गान्धर्व है। पञ्चजना शब्द की व्याख्या करते हुए आचार्य यास्क लिखते हैं कि-गान्धर्वा: पितरो देवा असुरा रक्षांसीत्येके (नि. ३/८) मनुष्य को मनुष्य बनना हो, देव बनना हो तथा गन्धर्व (संगीतज्ञ) बनना हो तो परमात्मा की कृपा आवश्यक है।

सामवेद में मन्त्र आता है कि संगीत में सिद्धहस्त पुरूष मेघों से पानी स्रवित कर सकता है अर्थात् वर्षा करा सकता है। मन्त्र में कहा गया है कि-संगीत स्वरों को अपने में अभिषुत किए हुए परमात्मा के आनन्द से आनन्दित पावन संगीतज्ञ जो गान्धर्व हैं, वे द्युलोक को वर्षा की ओर झुकाने वाले हैं, जलों को पृथिवी की ओर गिराने वाले हैं। ऐसे गान्धर्व हमारे लिए धनादि ऐश्वर्यों को प्राप्त करावें । शास्त्रीय पद्धति से जिसने संगीतशास्त्र का अध्ययन किया है, उसके लिए सामवेद में स्वरविद् शब्द का प्रयोग हुआ है। जो संगीत की शिक्षा लिए बिना स्वयं या सुनकर गीत गाते हैं, उनके लिए गातुविद् शब्द का प्रयोग हुआ है। सामवेद के ५४८वें मन्त्र में कहा गया है कि- भजनादि को गाना जानने वाला और दोषरहित स्वर से गाना जानने वाला, उनके लिए सम्यक् रूप से ध्यान करने योग्य आनन्दरस भरा शान्तस्वरूप परमात्मा प्रेरक स्नेही बनता है हमारे लिए वह परमात्मा उनके गान की आनन्द धारा में प्राप्त होता है।

प्रेम भारद्वाज
संपादक एवं सभा महामन्त्री

''महर्षि देव दयानन्द के जीवन की कुछ मुख्य-मुख्य घटनाएँ''

ले.-पं. खुशहाल चन्द्र आर्य C/o गोबिन्द राय आर्य एण्ड सन्ज़ १८० महात्मा गान्धी रोड़, (दो तल्ला) कोलकत्ता-700007

महर्षि देव दयानन्द के जीवन की वैसे तो सैकड़ों नहीं हजारों मुख्य मुख्य घटनाएँ है परन्तु हम यहाँ पर कुछ विशेष प्रमुख घटनाओं का ही वर्णन करते हैं जो इसी भाँति है:-

१. जन्म स्थान-महर्षि देव दयानन्द का जन्म मौरवी राज्य (गुजरात) में टंकारा गाँव में फाल्गुन वदी दशवी विक्रम संवत् १८८१ तद्नुसार १२ फरवरी सन् १८२४ ई. में पिता कर्षन जी तिवाड़ी, माता यशोदा देवी, कई लोगों का कहना है कि माता का नाम ''अमृताबेन'' था। जो भी हो, हो सकता है एक ही माता जी के दो नाम हो, इनके घर जन्म हुआ। स्वामी जी के बचपन का नाम मूलशंकर था। उनके पिता कर्षन जी तिवाड़ी औदीच्य ब्राह्मण थे। उनको बचपन में दयाल जी के नाम से भी पुकारा जाता था। उनके पिता जी शिव के अनन्य भक्त थे।

२. शिव-रात्रि को हुआ ज्ञान-फाल्गुन वदी चर्तुदशी सम्वत् १८८४ (२२ फरवरी सन् १८३८ ई.) को शिवरात्रि का दिन आ गया। बस्ती के सभी शैव अपने बच्चों के साथ शिव अराधना के लिए मन्दिर की ओर प्रस्थान करने लगे। मूलशंकर भी पिता जी के साथ मन्दिर में चला गया। पिता जी ने उसे पहले ही समझा दिया था कि जो भक्त पूरी रात जागरण करके शिव जी की आराधना करता है, उसे ही सुफल की प्राप्ति होती है। मूलशंकर ने निश्चय कर लिया था कि वह सारी रात जागकर शिव की विधिवत् आराधना करेगा, परन्तु उस समय उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब रात्रि का तीसरा पहर आरम्भ होते ही लगभग सभी अराधक मन्दिर के बाहर जाकर निद्रा की गोद में समाते चले गये। उनके पिता जी वही लुढ़क गये-और खर्राटें भरने लगे। पर धुन का धनी मूलशंकर शीतल जल की सहायता से जागते रहे और विधिवत् शिवराधना में लगे रहे। सभी भक्त गहरी निद्रा में सो गये थे, अवसर पाते ही चूहे अपने-अपने बिलों से निकलकर शिव पिण्डी पर चढ़े और प्रसाद का भोग लगाने लगे। यह सब देखकर पत्थर पूजा से मूलशंकर का मोह भंग हो गया। उसे निश्चय हो गया कि यह वह शंकर नहीं है, जिसकी कथा उसे सुनाई गई है कि वह तो चेतन है, डमरू बजाता है, बैल पर चढ़कर यात्रा करता है, शत्रुओं के संहार के लिए त्रिशूल रखता है, परन्तु यह शिव तो चूहों से अपनी भी रक्षा नहीं कर सकता, तो हमारी रक्षा क्या करेगा, ऐसा विचार आते ही उसने अपने पिता जी को जगा दिया और एक सीधा सा प्रश्न किया ''पिता जी यह कथा वाला शिव है या कोई दूसरा?''

पिता कर्षन जी तिवाड़ी ने अपने पुत्र मूलशंकर को शिव के सम्बन्ध में बहुत समझाया परन्तु पुत्र का मन पिता जी की बातों से सन्तुष्ट नहीं हुआ और मूलशंकर को इस घटना से पत्थर पूजा यानि जड़ पूजा से विश्वास उठ गया और वह मन्दिर से उठकर घर चला गया और पिता जी की बिना आज्ञा लिए माता जी से भोजन लेकर भोजन कर लिया और सो गया।

३. छोटी बहन व चाचा जी की मृत्यु और गृह त्याग-शिव रात्रि के दृश्य से मूल-शंकर के मन में वैराग्य उत्पन्न हो गया और सच्चे शिव की खोज में ध्यान रहने लगा। इसी बीच जब मूल शंकर सोलह वर्ष के हुऐ तो उसकी छोटी बहन की हैजे की बीमारी से मृत्यु हो गई, तब मूलशंकर बिल्कुल नहीं रोया और एक तरफ खड़ा होकर विचार करने लगा कि यह मृत्यु क्या है? क्या मुझे भी एक दिन इस मृत्यु के मुख में जाना पड़ेगा। तीन साल बाद जब मूलशंकर की आयु उन्नीस वर्ष की हो गई थी, तब उसका चाचा जो-उसको अति प्यार करता था, उसकी मृत्यु हो गई, तब मूलशंकर बहुत अधिक रोया और उसकी वैराग्य की भावना और अधिक बढ़ गई। उसने अपनी भावना को मित्रों को बतला दी और यह बात उनके माता-पिता के पास पहुँच गई। उन्होंने मूलशंकर का विवाह करने का विचार बना लिया। मूलशंकर विवाह किसी हालत में भी करना नहीं चाहते थे। इसलिए उसने गृह त्याग का मन बना लिया। उसने सन् १८४६ ई. अपनी इक्कीस वर्ष की आयु में गृह त्याग करके जंगल की ओर चल पड़े। कुछ दूर चलने पर उसको साधु वेष में कुछ ठग मिले जिन्होंने मूलशंकर के गहने अंगुठी, तथा कीमती वस्त्र उतरवा लिये। चलते-चलते मूलशंकर सायला (अहमदाबाद) और राजकोट के बीच में पहुँचे वहाँ उसको एक ब्रह्मचारी मिला जिसने उसको सन् १८४६ ई. में ब्रह्मचर्य की दीक्षा दी और उसका नाम शुद्ध चैतन्य रख दिया।

अब ब्रह्मचारी शुद्ध चैतन्य कुछ दिन सायला ठहरकर फिर से आगे बढ़े तो वे अहमदाबाद के समीप कोट काँगड़ा पहुँचे, वहाँ वैरागियों का डेरा लगा हुआ था। वहाँ शुद्ध चैतन्य को सिद्धपुर (गुजरात) मेला की जानकारी मिली, जहाँ साधु-सन्त, योगी-महात्मा, एकत्रित होते है। वहाँ के लिए प्रस्थान किया। रास्ते में उनको अपने कुल का परिचित एक वैरागी साधु मिला। उसके पूछने पर शुद्ध चैतन्य ने भावावेश में अब तक की सम्पूर्ण घटना उसे कह सुनाई और सिद्धपुर मेले में जाने का अपना विचार भी बतला दिया। उस परिचित वैरागी ने अपने घर पर पहुँच कर कर्षन जी तिवाड़ी को शुद्ध चैतन्य का पूरा विवरण साथ ही सिद्धपुर मेले में जाने का पूरा विवरण समाचार पत्र द्वारा भेज दिया। इधर शुद्ध चैतन्य ने सिद्धपुर मेले में नीलकण्ठ महादेव के मन्दिर में अपना आसन जमाया। उधर पिता जी पत्र मिलते ही कुछ सिपाहियों को साथ लेकर सिद्धपुर मेले में पहुँच गये और नीलकण्ठ महादेव के मन्दिर में पहुँच कर अपने बेटे को वैरागी वेश में देखकर आपे से बाहर हो गये और बोले ''कुल कलंकी'' क्या तू अपनी माता की हत्या करना चाहता है।'' पिता को देखकर शुद्ध चैतन्य खड़ा हुआ और उनके पैर छूते हुऐ बोले ''किसी के बहकावे में आकर मैने घर त्याग दिया था, अब मैं आपके साथ चलूँगा। परन्तु इससे पिता जी का क्रोध शान्त न हुआ। उन्होंने उसके गेरूए वस्त्र फाड़ दिये और तुम्बा तोड़ दिया। उसे श्वेत वस्त्र पहनाये और सिपाहियों के पहरे पर बिठा दिया। दो दिन तो ऐसे ही निकल गये। तीसरी रात का तीसरा प्रहर आरम्भ हुआ तो प्रहरी उँघने लगे। धीरे-धीरे प्रगाढ़ निद्रा में पहुँच गये, तब शुद्ध चैतन्य शौच जाने का बहाना करके पानी से भरा लोटा हाथ में लिया और दबे पाँव वहाँ से खिसक गये। कुछ दूर चलने के बाद उसे एक बगीचे में मन्दिर दिखाई दिया। मन्दिर के साथ ही एक विशाल वटवृक्ष था। मन्दिर की छत्त पर वटवृक्ष की ओट में वह बैठ गया। कुछ देर बाद कुछ सिपाही मन्दिर में आये और शुद्ध चैतन्य को बिना देखे ही वहाँ से चले गये। प्रात: शुद्ध चैतन्य पेड़ के सहारे नीचे आये और दो कोस दूर एक ग्राम में रात व्यतीत की। इस प्रकार पिता जी से अन्तिम भेंट सिद्धपुर में करके फिर सदा के लिए विदा हो गये।

४. सन्यास दीक्षा: मन्दिर से चलकर शुद्ध चैतन्य अहमदाबाद होते हुऐ बड़ौदा में आकर चैतन्य मठ में ठहरें। वहाँ उनकी ब्रह्मानन्द ब्रह्मचारी जो वेदान्त के अच्छे विद्वान थे, उनसे भेंट हुई। उनसे वेदान्त पर खुलकर चर्चा हुई और उनसे कुछ वेदान्त की जानकारी भी हुई। शुद्ध चैतन्य को भोजन बनाने में काफी समय लग जाता था। जिस से विद्याध्ययन में बाधा पड़ती थी। यदि सन्यास की दीक्षा ले ली जाए तो इस झंझट से बचा जा सकता है। इसलिए उसने एक ब्रह्मचारी वैदिक विद्वान् स्वामी पूर्णानन्द जो चाणोद (गुजरात) के पास एक जंगल में आऐ हुऐ थे। उनसे सन्यास की दीक्षा लेने का विचार किया और जल्दी ही उनके पास पहुँच कर सन्यास की दीक्षा देने की प्रार्थना की। पहले तो उन्होंने सन्यास की दीक्षा देने से इनकार कर दिया। फिर कुछ समय बाद काफी अनुनय-विनय करने से दीक्षा देने की अनुमति दे दी। और शुद्ध चैतन्य को स्वामी पूर्णानन्द ने सन्यास की दीक्षा देकर ''दयानन्द सरस्वती'' नाम रख दिया। अब दयानन्द सरस्वती भोजनादि बनाने के झंझट से मुक्त हो। विद्याध्ययन में लग गये। स्वामी पूर्णानन्द, पूज्य स्वामी ओमानन्द के शिष्य थे और स्वामी विरजानन्द, स्वामी पूर्णानन्द के शिष्य थे। स्वामी पूर्णानन्द जो स्वामी दयानन्द के गुरु थे। स्वामी पूर्णानन्द ने ही स्वामी दयानन्द को अपने शिष्य स्वामी विरजानन्द के पास मथुरा जाने की प्रेरणा दी थी। **(क्रमश)**

पञ्चाहुत्या= शुद्ध घृत की पांच आहुतियाँ

ले.-डा. अशोक आर्य पाकेट १/६१ रामप्रस्थ ग्रीन से. ७ वैशाली

विगत मन्त्रों के माध्यम से हमने चार मन्त्रों के द्वारा घी से सनी हुई तीन समिधाएं यज्ञ कुण्ड में उस स्थान के ऊपर रखीं, जहाँ अग्नि जल रही थी, ताकि यह घी से सनी हुई समिधाएँ शीघ्र ही अग्नि को पकड़ लें। अब हम यज्ञ की अगली ग्यारहवीं क्रिया के साथ आगे बढ़ते हुए एक ही मन्त्र को पांच बार बोलते हुए प्रत्येक मन्त्र के अंत में स्वाहा बोलने के साथ ही एक एक आहुति गर्म घी की डालते जावेंगे। मन्त्र इस प्रकार है:-दशम विधि के अंतर्गत हमने तीन समिधाओं को चार मन्त्रों का उच्चारण करते हुए स्वाहा के साथ यज्ञ की अग्नि को भेंट किया था।

ओम् अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्धवर्धय

चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्म-वर्चसेनान्नाद्येन समेधय, स्वाहा।

इदमग्नये जातवेदसे, इदन्न मम।।१।। आश्वलायन गृह्य. १.१०.१२

आश्वलायन गृह्यसूत्र में से लिया गया यह मन्त्र वैदिक अग्निहोत्र की दशम क्रिया समिधानम् के अंतर्गत प्रथम मन्त्र तथा प्रथम समिधा डालने के रूप में भी आया है किन्तु जब हम इस मन्त्र को ग्यारहवीं क्रिया के रूप में प्रयोग करते हैं तो इस मन्त्र को इस क्रिया के अंतर्गत पांच बार बोलना होता है और पांच बार ही इस मन्त्र के स्वाहा के साथ एक एक करते हुए उबलते हुए देशी गाय के देशी घी की आहुतियाँ दी जानी होती हैं।

वैदिक अग्निहोत्र की दशम विधि के अंतर्गत हमने चार मन्त्रों के गायन के साथ स्वाहा आने पर गर्म घी से डुबोई गई समिधा डालते हुए तीन समिधायें यज्ञ कुण्ड में डालीं थीं। यहाँ ग्यारहवीं क्रिया के अंतर्गत हमने देखा कि समिधायें तो हमने रख दीं किन्तु यह धीरे धीरे अग्नि को पकड़ती जा रही हैं। कहावत है एक तो आग और उपर से घी। इस कहावत का भाव है कि जली हुई आग में घी डालने से आग तीव्र जलती है। यज्ञ की अग्नि भी तीव्र से तीव्रतर जलनी चाहिए, इसलिए इस ग्यारहवीं क्रिया के अंतर्गत हम यज्ञ में केवल घी की ही आहुतियाँ देते हैं ताकि इस घी की सहायता से अग्नि अपना तीव्र वेग दिखाने लगे। तीव्र वेग में दी गई आहुतियाँ एक दम से हल्की होकर वायुमंडल में दूर-दूर तक फैल जाती हैं। इस प्रकार दूर दूर तक जहाँ तक यह जा पाती है, वहां तक के सब प्रकार के दुर्गंधों को यह दूर करती हुई वातावरण को सुगन्धित करती है। घी की पौष्टिकता से वातावरण भी पौष्टिक हो जाता है। इस पौष्टिक वातावरण में जब हम श्वास लेते हैं तो हमारा शरीर इस पुष्टि वर्धक वायु का सेवन करते हुए पुष्टि को प्राप्त होता है। यज्ञ की यह वायु एक और काम करती है। यह वायु वातावरण में जहाँ जहाँ भी जाती है, वहां वहां से यह रोग के कीटाणुओं का नाश करती है। इस प्रकार रोगरहित वायु का सेवन करते हुए हम शुद्ध रोग रहित वायु को प्राप्त करते हैं और इस वायु के सेवन से हमारे अन्दर के रोगाणु भी नष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार हम रोग रहित हो जाते हैं।

इस मन्त्र का विशद् अर्थ हम दशम विधि के अंतर्गत दे आये हैं, यहाँ उसे ही एक बार फिर से दोहरा देते हैं ताकि आप सब इसे आत्मसात् कर सकें। इस मन्त्र में शब्दानुसार अर्थ इस प्रकार है:-

जातवेद: अयं इध्म: ते आत्मा

हे सब ऐश्वर्यों के स्वामी प्रभो! यह काष्ठ तेरा आत्मा है। यहाँ काष्ठ से अभिप्राय: लकड़ी की समिधा से है। यहाँ हम यज्ञ की अग्नि को तीव्र करने के लिए कार्य कर रहे हैं और यह तीव्रता घी से सनी हुई लकड़ी ही दे सकती है। इस कारण यह लकड़ी इस यज्ञ स्वरूप प्रभु की आत्मा कही गई है। यह काष्ठ ही तेरा (यज्ञ का) जीवन भी है। अग्नि का अस्तित्व लकड़ी के बिना संभव ही नहीं होता इसलिए यहाँ इस यज्ञ में डाली जाने वाली समिधा को अग्नि स्वरूप प्रभु का जीवन कहा गया है।

तेन इध्यस्व च वर्धस्व

इस प्रकार अग्नि स्वरूप परमात्मा को यहाँ सम्बोधित करते हुए कहा गया है कि यह जो (लकड़ी की समिधा) घी से पूरी तरह से लिपटी हुई है, आप इस समिधा के द्वारा प्रकाशित हों अर्थात् यह समिधा यज्ञ की इस अग्नि को तीव्रता दे।

इत्-ह अस्मान् च वर्धय

अग्नि का काम है, इस के अन्दर जो भी डाला जावे, उसके गुणों को बढ़ा कर लौटा देवे अर्थात् इन गुणों को वायुमंडल में, पर्यावरण में फैला देवे ताकि इनका लाभ जन सामान्य अथवा प्राणी मात्र को बिना किसी प्रकार का भेदभाव किये मिल सके। इस कारण यहाँ कहा गया है कि हे अग्नि देव! यज्ञ में डाली इस समिधा अथवा गर्म उबलते हुए घी की आहुतियों के द्वारा न केवल आप ही प्रचंड होकर बढ़ें अपितु हमें भी आगे बढ़ने के लिए अपने साथ ले चलें अथवा हमें मार्ग दिखावें।

प्रजया पशुभि: ब्रह्मवर्चसेन अन्नाद्येन सम-एधय

इस के साथ ही हम अग्निदेव से एक याचना इस आहुति के माध्यम से और भी करते हैं, वह यह कि प्रजा अर्थात् इस जगत् में तेरी प्रजा स्वरूप जितनी भी जीवात्माएं हैं। इन जीवात्माओं में चाहे कोई मनुष्य है, पशु है या अन्य किसी प्रकार का कोई भी प्राणी है, इन सब के अन्दर ज्ञान का तेज भर दो। भाव यह है कि इस यज्ञ को करने से सब प्राणियों की बुद्धि तीव्र हो। केवल बुद्धि ही तीव्र न हो अपितु हे अग्निदेव! इन सब प्राणियों का हाजमा भी अच्छा हो। यदि हाजमा अच्छा रहेगा तो ही यह जो कुछ भी उपभोग करेंगे, चाहे वह क्षुधा को शांत करने के लिए हो अथवा बौद्धिक हो, को पचा पाने में और समझ पाने में सक्षम हो सकेंगे। इस प्रकार प्रकांड पंडित बनकर तथा प्राप्त किये हुए को पचा पाने में अथवा सम्भाल पाने में सक्षम हो सकें।

स्वाहा इंद जातवेदसे अग्नये मम न

हे अग्नि देव! हम अपने मन, वचन और कर्म से यह ठीक ही कह रहे हैं कि यह जो काष्ठ रूप समिधा अथवा देशी गाय के शुद्ध देशी घी को आप के समर्पण कर रहे हैं, यह वास्तव में ही सब प्रकार के धनों के स्वामी अग्निदेव के लिए ही समर्पित है। इस पर मेरा कुछ भी, किसी प्रकार का भी अधिकार नहीं है।

इस सब से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि अग्नि वास्तव में सब प्रकार के ऐश्वर्यों का मुख होता है। देवता लोग अग्नि रूपी मुख से ही सब कुछ खा पाते हैं किन्तु हमारा यह यज्ञ करने वाला साधक तो परम अग्नि को प्राप्त करने की चाहना रखता हुआ वह परमात्मा का ध्यान करते हुए आत्म चिन्तन कर रहा है। उसके इस आत्म चिन्तन का आधार इस काष्ठ तथा घी से प्रचंड रूप से जलने वाली यह आग ही तो है। इस के उल्ट वह परमात्मा रूप अग्नि, जिसे हम परम अग्नि के नाम से जानते है, वह अग्नि तो इस संसार के कण कण में, अणु अणु में, पत्ते पत्ते में व्याप्त है। इन सबका आधार वह अग्नि बनी हुई है। शुद्ध जीवन जिसे आर्य जीवन के नाम से जाना गया है, यह तो केवल सांसारिक ही नहीं पारलौकिक ऐश्वर्यों को पाने की ही सदा कामना करता रहता है। साधक ने समय समय पर जितनी साधना की होती है उसके अनुसार उसकी रुचियों में भी परिवर्तन होता रहता है। जिस प्रकार स्कूल में पढ़ने वाले बालक की योग्यता के अनुसार कक्षाएं बदलती रहती हैं तो इनके साथ ही उसकी सोच भी बदलती है, यह अवस्था ही साधक और उसकी की जा रही साधना की भी होती है, तो भी साधारण अवस्था में प्रत्येक मनुष्य की सदा यह इच्छा तो कम से कम होनी ही चाहिए कि उसका शरीर स्वस्थ तथा उन्नत हो, उसका ज्ञान निरंतर बढ़ता रहे, उसको सब ओर से यश की प्राप्ति हो तथा सदा ही सब का उपकार करता रहे। यह भावनाएं आहुति देते समय आत्मसमर्पण के भाव से की जाती है। यह आहुतियाँ स्वर्ग प्राप्ति का साधन स्वरूप समझते हुए देनी चाहियें।

व्याख्यान

यह जगत् परमपिता परमात्मा की रचना है। उसकी रची हुई इस रचना में जितने भी छोटे अथवा

(शेष पृष्ठ 7 पर)

मनुष्य के लिए आध्यात्मिकता की आवश्यकता

ले.-डा. सत्यदेव सिंह 507 गोदावरी ब्लॉक, अशोका सिटी गोवर्धन चौक, कृष्णा नगर, मथुरा

'आध्यत्मिकता यह शब्द संस्कृत भाषा का है, जिसे अँग्रेजी भाषा में 'स्प्रिच्युअलिटी' कहा जाता है। आध्यत्मिकता का अर्थ प्रधान रूप में आत्मा तथा परमात्मा विषय ज्ञान रखना है। इसके उपरान्त शरीर, मन, बुद्धि, संस्कार, मोक्ष, वैराग्य, पुनर्जन्म आदि सूक्ष्म विषय के ज्ञान का समावेश 'अध्यात्म' में हो जाता है। वेद और दर्शन की भाषा में इसे 'पराविद्या' कहते हैं। इस विषय में सामान्य जन की श्रद्धा, विश्वास और रुचि कम दिखाई देती है।

विद्या दो प्रकार की होती है। परा और अपरा विद्या। 'अपरा विद्या' वह है, जो हमें स्कूल, कालेज विश्वविद्यालय में पढ़ाई जाती है। अत: भौतिक विद्या को अपरा विद्या कहते हैं।

आजकल व्यक्ति से लेकर परिवार, गली, समाज, नगर, प्रान्त, राष्ट्र तथा विश्व तक पराविद्या अर्थात् अध्यात्म विद्या के अभाव में सभी दु:खी हैं, पीडित है, अन्दर ही अन्दर जल रहे हैं। अध्यात्म विद्या के अभाव में मनुष्य समय-समय पर ठोकरें खाता है, खुद दु:खी होता है, तरह-तरह के क्लेश उठाता है और अन्यों को भी दु:खी-पीड़ित करता रहता है।

हमारी गुरुकुलीय वैदिक शिक्षा प्रणाली में पांच वर्ष के बच्चे को विद्याध्ययन के लिए भेजा जाता था, उसके सिर के बाल कटवा कर, मुण्डन करवाकर, उपनयन संस्कार के बाद एक दण्ड और कटिवस्त्र दिया जाता था। ब्रह्मचारी (विद्यार्थी) से प्रतिदिन ध्यान, प्राणायाम, उपासना, यज्ञ आदि करवाते थे। उन्हें सन्ध्या, पुनर्जन्म, मुक्ति, विवेक, आत्मा-परमात्मा, मन आदि विषयक शास्त्र पढ़ायें जाते थे। बाल्यकाल में ब्रह्मचारी में त्याग, तपस्या, प्रेम, संगठन धैर्य, क्षमा, आत्मसंयम आदि गुणों को भरा जाता है। अत: वह सुखी, शान्त, प्रसन्न, प्रगतिशील, विद्वान् धार्मिक, आस्तिक और उत्तम मनुष्य बनकर गुरुकुल से प्रस्थान करता था। ऐसा जीवन जीने वाले व्यक्ति बालक फिर भला कैसे दु:खी, पीड़ित, उद्दण्ड, पराधीन, अर्थात् ऐसे ब्रह्मचारी, विद्या-अध्ययन करने वाले बालक-सदा सुखी व प्रसन्न ही रहते हैं।

आध्यात्मिकता का तात्पर्य भी यही है कि स्वयं के सुखी-सन्तोषी जीवन के साथ-साथ दूसरों को भी अपने से अधिक सुखी-समृद्ध बनाना। इसका मुख्य विषय नित्य-प्रतिदिन आत्मा तथा परमात्मा के विषय में चिन्तन-मनन आदि करते रहना है इसके महत्व को साधारणत: मनुष्य समझता नहीं है, इस कारण वह धनवान, बलवान, विद्यावान, कीर्तिवान होते हुए भी दु:खी रहता है। संसारी व्यक्ति, अपने अपमान, निन्दा, चुगली, झूठ-आदि कृत्यों को सहन नहीं कर पाता है, वह स्वरूप से बेचैन, अशान्त और असामान्य-सा रहता है। ऐसा व्यक्ति कभी-कभी पागल-सा दिखाई देता है और वह आवेग-आवेश में आकर बलात्कार व आत्महत्या जैसे जघन्य कृत्य कर बैठता है। वह विवेक-शून्य होकर अपना स्वयं का तथा दूसरों का बड़ा भारी नुकसान कर डालता है।

इसके विपरीत जो सदाचारी, धार्मिक, आस्तिक् या अध्यात्म-वादी मनुष्य होता है वह अपने मार्ग से, च्युत् नहीं होता, वह अपने सदाचरण से डिगता नहीं है, चाहे उसके ऊपर छल-कपट-पाखण्ड, धोखे, निन्दा या चुगली के कितने ही आरोप क्यों न लगा दिये जायें। उसकी अडिगता का मुख्य कारण होता है-उसका अध्यात्मवादी होना। उसके पास 'पराविद्या' अध्यात्मविद्या होती है, इस कारण वह हर पल, हर क्षण सजग रहते हुए, संघर्षों का सामना करते हुए अपने कर्त्तव्यपथ पर सदा अग्रसर रहता है। आध्यात्मिकता को अपनाने वाला मनुष्य मार्ग में आने वाली बाधाओं, समस्याओं व संघर्षों से सामना करता हुआ आगे बढ़ता जाता है, स्मरण करता है और परमात्मा उस पर अहैतुकी कृपा करते ही हैं।

आध्यात्मिकता का तात्पर्य स्वयं अधिकतम सुखी-सन्तोषी बनना और दूसरों को भी अधिकाधिक सुखी-समृद्ध बनाना है। आध्यात्मिकता का मुख्य चिन्तनीय विषय आत्मा और परमात्मा है। आध्यात्मिकता के महत्व को आजकल लोग गम्भीरता से लेते नहीं, उसे समझते नहीं है। अत: धनवान, बलवान, विद्यावान, एवं यशस्वी होते हुए भी मनुष्य दु:ख से ग्रसित हो ही जाते है और कभी-कभी वे आवेग में आकर, आवेश में आकर ऐसा काम कर डालते हैं। जो हम सोच भी नहीं सकते। वे पागल-सा होकर बलात्कार कर बैठते हैं, आत्महत्या कर लेते हैं अथवा किसी दूसरे की हत्या भी कर डालते हैं। वे विवेकहीन होकर स्वयं का और दूसरे का भारी नुकसान कर डालते हैं।

जो सदाचारी, धार्मिक, आस्तिक या अध्यात्मवादी है, उसको कई बार निर्दोष होते हुए भी बिना कारण के अपमान को सहना पड़ता है। उस पर झूठे आरोप लगाये जाते हैं, कोर्ट-कचहरी में मुकद्दमे चलाते हैं, उनके साथ छल-कपट-धोखा भी होता है। उसकी निन्दा, चुगली, और विश्वासघात भी होता है, किन्तु अध्यात्मवादी के पास 'पराविद्या' होने से, वह सभी संघर्षों का सामना कर लेता है, अन्त में 'सत्यमेव जयते' उक्ति सार्थक होती है।

अध्यात्मवादी व्यक्ति संसार के आकर्षणों से प्रभावित नहीं होते। वह सत्य के मार्ग में आने वाले काँटे, अडंगे, समस्याओं व संघर्षों का दृढ़ता के साथ सामना करता है, कठिनाइयों को दूर करने का उपाय ढूँढ़ता है और अपनी आस्तिकता बनाये रखता है, परमात्मा से मदद माँगता रहता है।

धैर्य, क्षमा, दया, निष्कामता, सहन शीलता आदि कहीं बाजार में नहीं मिलते, जब चाहो तब खरीद लो। जिसके पास 'अध्यात्मविद्या' है, वह आत्मनिरीक्षण, करेगा, घोर पुरुषार्थ करेगा और फिर ईश्वर से वह मदद करने की प्रार्थना करेगा।

अध्यात्मवादी व्यक्ति कभी भी संघर्षों से विचलित नहीं होता है। घबराता नहीं हैं वह तो अपना काम शान्त मन से करता रहता है। अपने ऊपर कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ने नहीं देता। समस्या आने पर वह छटपटाता नहीं है, रोता नहीं है व दु:खी भी नहीं होता है। वह तो अपने लक्ष्य प्राप्ति की ओर आगे बढ़ता जाता है। वह स्थिर चित्त होता है।

हमने माना कि हमारे परिवार में चार सदस्य हैं, किन्तु हम यह भूल जाते हैं कि इस परिवार में एक पांचवां सदस्य भी है, जो सदा हमारे साथ रहता है और 24 घण्टे तक साथ रहता है। वह कौन है? वह है हमारा परमपिता मेरे अन्दर है, मेरे मन, बुद्धि, अहंकार में है, वह प्रत्येक अंग-उपांग में अवस्थित है। वह अन्दर बाहर सर्वत्र है। यह सत्य है कि वह मुझे देख रहा है, सुन रहा है, जान रहा है। उसकी नजर से मैं बच नहीं सकता। वह मेरे पाप कर्मों का दण्ड भी मुझे अवश्य देगा। अत: हर काम हमें परमात्मा से पूछ कर ही करना चाहिए। अमुक कार्य हे परमात्मन्! मैं करूँ या न करूँ? अमुक कार्य मेरे लिए हितकारी है या अहितकारी? अमुक काम उचित है या अनुचित? यही तो वास्तविक रूप में आध्यात्मिकता है। इसीलिए हमें अपना सर्वोच्च लक्ष्य परमात्मा को बना लेना चाहिए और परमात्मा के प्रति अटूट श्रद्धा और परम विश्वास बनाये रखना चाहिए।

साधक को चाहिए कि वह परमात्मा के प्रति श्रद्धावान् होकर, हृदय से गद्गद् होकर ज्ञान-विज्ञान, दया, प्रेम, सहनशीलता, सुख, आनन्द मांगे। परमात्मा ने हमें बहुत कुछ दिया है, वह हमें और भी बहुत अधिक दे सकता है। वह सर्व सामर्थ्यवान् है।

साधक अपने को कभी छोटा न समझे, वह भी अपनी सामर्थ्य-

(शेष पृष्ठ 7 पर)

पृष्ठ 2 का शेष-त्रैतवाद के पोषक-महर्षि दयानन्द सरस्वती

बनाने से न बने, आप बने नहीं दूसरे को प्रकारान्तर से बना दे। इस परिभाषा में कुम्हार घड़े का निमित कारण हुआ। साधारण कारण वह है जो किसी वस्तु के बनाने में साधन हो या साधारण निमित हो। इस परिभाषा में कुम्हार का गोल चाक आदि घड़े के निर्माण में साधारण कारण हुआ।

त्रैतवाद का या बहुत्ववाद वह सिद्धान्त है जो कहता है मूल भूत सत्ताऐं तीन है। ये मूलभूत सत्ताऐं हैं ईश्वर जीव तथा प्रकृति। वेदों में इसी सिद्धान्त का प्रतिपादन है। रामानुजाचार्य (जन्म 1017) मध्वाचार्य (जन्म 1119) भी ईश्वर तथा जीव की अलग अलग सत्ताऐं मानते थे। वर्तमान युग में त्रैतवाद का प्रतिपादन महर्षि दयानन्द (1824-1883) ने किया और अनेकों पण्डितों ने सांख्य दर्शन के सूत्रों का भाष्य त्रैतवाद ही किया है। तीन मूल भूत सत्ताओं ईश्वर जीव प्रकृति के सिद्धान्त को हमने त्रैतवाद या बहुत्ववाद की श्रेणी में रखा है।

सृष्टि का उपादान कारण प्रकृति है परमाणु है। यह उपादान कारण न हो तो सृष्टि बन नहीं सकती। सृष्टि का निमित कारण ब्रह्म या ईश्वर है। वैसे सृष्टि में प्रकृति ने नाना प्रकार ब्रह्माण्ड में सूर्य-चन्द्र-पृथ्वी-अप-तेज-वायु-आकाश आदि तथा पिंड में ज्ञानेन्द्रियां कर्मेन्द्रियां आदि साधारण कारण है। जैसे कुम्हार द्वारा निर्मित घड़े का उद्देश्य पानी भरना है, वैसे सृष्टि का उद्देश्य जीवात्मा को कर्म फल देना होता है। उसे विकास के मार्ग पर डाल देता है। प्रकृति परमेश्वर के साथ जीवात्मा न हो तो सृष्टि का संचालन खेल मात्र रह जाता है।

इन सब कारणों से सृष्टि की रचना में न एकत्वाद से काम चलता है न द्वित्वाद से काम चलता है। त्रैतवाद से ही इस समस्या का समाधान हो सकता है। उपनिषदों गीता सांख्य में त्रैतवाद माना है।

वेदों में त्रैतवाद:-द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते

तयोरन्य: पिप्पलं स्वादु अति अनश्नन अन्य: अभि चाकशीति।। (ऋ.)

बालात एकम अणीयस्कम उत एकं नैव दृश्यते।

तत: परिण्वजीयसी देवता सा मम प्रिया।। (अथर्ववेद)

पिण्ड रुपी वृक्ष तथा ब्रह्माण्ड रुपी वृक्ष में वह जीव रुपी पक्षी पिण्ड में इन्द्रियों का तथा ब्रह्माण्ड में सांसारिक विषयों का मीठा मीठा लुभावना भोग ले रहा है, दूसरा परमेश्वर रुपी पक्षी जीवात्मा द्वारा किये गये कर्मों का फल देने के लिए उसकी गतिविधि को देखता रहता है।

नोट-इस लेख का सारांश वेदों में वैज्ञानिक रहस्य लेखक डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार से लिया गया है।

पृष्ठ 6 का शेष-मनुष्य के लिए आध्यात्मिकता की आवश्यकता

शक्ति के, पुरुषार्थ-तप से उच्च कोटि का मानव स्वयं को बना सकता है, वह भी दयानन्द, विवेकानन्द, या श्री अरविन्द जैसा ऋषि-महर्षि बन सकता है। परन्तु इसके लिए तीव्र-इच्छा, उत्कट-अभिलाषा, अभीप्सा होना परमावश्यक है। हम साधक के रूप में कभी विषयवासनाओं में उलझें नहीं, परमात्मा के नाम (ओ३म्) का निरन्तर चिन्तन-मनन-निदिध्यासन करते रहें और सांसारिक विषयों से वैराग्यवान् बनें। हम परमात्मा को अपना गुरु आचार्य या पथ-प्रदर्शक बना लें। हम परमात्मा को अपना माता-पिता अथवा मित्र बना लें और उसके निर्देश, आदेश व आज्ञानुसार ही अपना जीवन चलाऐं। अपने जीवन में परमात्मा को प्रधानता देने से निश्चय ही हमारा जीवन बदल जायेगा। और हमारी मानसिक-चेतना ऊर्ध्वगति होने लगेगी। वास्तव में यही आध्यात्मिकता है। इसे अपनायें, अपने जीवन में टालें, व्यवहार में लायें।

पृष्ठ 5 का शेष-पञ्चाहुत्या= शुद्ध घृत की पांच आहुतियाँ

बड़े प्राणी हैं, सब कुछ न कुछ देने वाले होने के कारण देवता स्वरूप ही माने जाते हैं और इस धारणा के अनुसार सब देवता अपने अपने ढंग से यह अग्निहोत्र तथा यज्ञ कर रहे हैं। जब विश्व के सब प्राणी यज्ञ की आहुतियाँ डाल रहे हैं तो क्या कारण है कि मैं यह आहुतियाँ देते हुए इसे अपना मानते हुए तुच्छ क्यों बनूँ? इस तुच्छता की भावना से ऊपर उठ कर क्यों न इन देवताओं के यज्ञ करने वाली इस मंडली के ही साथ मिल जाऊं? इस अग्निहोत्र को अपनी तुच्छ आहुति भेंट करते हुए मेरी यह अवस्था हो कि मैं एक हाथ से जो भी आहुति डालूं, उसका मेरे दूसरे हाथ तक को भी पता न चल पावे। हे पिता! मेरे अन्दर त्याग का यह भाव पैदा करो।

वैदिक साधनाश्रम गुरदासपुर का 64 वां वार्षिकोत्सव

हर वर्ष की भांति इस वर्ष भी वैदिक साधनाश्रम गुरदासपुर का 64 वां विश्व शान्ति महायज्ञ 11 सितम्बर 2020 से 13 सितम्बर 2020 रविवार तक स्वर्गीय स्वामी प्रकाशानन्द जी महाराज के 115 वें जन्मदिवस एवं स्वर्गीय श्री रामनिवास शास्त्री जी अखण्ड़ अध्यक्ष वैदिक साधनाश्रम के स्मरण में मनाया गया। इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महोपदेशक पं. विजय कुमार शास्त्री जी के प्रवचन तथा भजनोपदेशक श्री अरूण वेदालंकार के मधुर भजन हुए। यह कार्यक्रम प्रात: 6 बजे से 8 बजे तक तथा सांयकाल को 4 से 6 बजे तक चलता रहा। इस अवसर पर नगर के लोगों ने बड़ी श्रद्धा के साथ भाग लिया यज्ञ के ब्रह्मा पं. विजय शास्त्री एवं नितिश शर्मा थे। कार्यक्रम की समाप्ति पर आगन्तुक लोगों के लिए प्रीतिभोज का आयोजन किया गया। शान्तिपाठ के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ।

ऑनलाईन भजन प्रतियोगिता का आयोजन

आर्य समाज शक्ति नगर अमृतसर के तत्वावधान में रविवार दिनांक 30 अगस्त 2020 को ऑनलाईन भजन प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिसमें 19 प्रतियोगियों ने अलग अलग जगह से इसमें भाग लिया। सभी प्रतियोगियों ने आर्य समाज, वेद, स्वामी दयानन्द जी एवं देश के महान सपूतों के भजन गाये और सब भक्तिरस में डूब गये। इस कार्यक्रम के तीन जज प्रो.कुलदीप आर्य अध्यक्ष संस्कृत विभाग डी.ए.वी. कालेज अमृतसर, श्रीमती सुनीता भाटिया रिटायर्ड अध्यापिका एस.एल भवन स्कूल अमृतसर एवं सोनी आर्य वैदिक भजनोपदेशक एवं संगीत विशेषज्ञ अमृतसर ने बड़ी सूझबूझ से अपना काम किया। प्रतियोगिता में पहले तीन स्थान प्राप्त करने वाले प्रथम इंदिरा अरोड़ा गाजियाबाद, द्वितीय सुरति गाजियाबाद, सौरव तलवाड़ अमृतसर, रेणु घई अमृतसर, तृतीय रंजू जी अमृतसर। आर्य समाज शक्ति नगर अमृतसर समय समय पर ऐसे आयोजन करती रहती है।

-मुकेश आनन्द उपमंत्री

आर्य मर्यादा के ग्राहक महानुभावों की सेवा में

आर्य मर्यादा साप्ताहिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुंच रही है। जिन आर्य मर्यादा के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। आर्य मर्यादा का वार्षिक शुल्क मात्र 100/- रुपये है और आजीवन सदस्यता शुल्क 1000/- रुपये है। इसलिये मेरी सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्य समाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक आर्य मर्यादा के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है आप का सहयोग हमें प्राप्त होगा।

-व्यवस्थापक आर्य मर्यादा

आर.के.आर्य कालेज नवांशहर में हिन्दी दिवस का आयोजन

आर.के.आर्य कालेज नवांशहर में हिन्दी दिवस के अवसर पर वेबिनार का आयोजन किया गया। इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महामंत्री श्री प्रेम भारद्वाज जी, आर.के.आर्य कालेज के प्रधान श्री विनोद भारद्वाज जी, प्रिंसीपल डा. संजीव डाबर जी, डा. बलविन्द्र सिंह वेबिनार को सम्बोधित करते हुये।

राधा कृष्ण आर्य कॉलेज नवांशहर में कॉलेज के हिन्दी विभाग द्वारा हिन्दी दिवस के अवसर पर एक बेविनार का आयोजन किया गया। इसका मुख्य विषय हिन्दी भाषा: व्यवहारिकता एवं संभावनाएं रखा गया। बेविनार का शुभारम्भ हिन्दी विभाग के प्रवक्ता डॉ. संजीव डाबर द्वारा सभी विद्यार्थियों एवं मुख्यातिथि के स्वागत से किया गया। बेविनार का मुख्य आकर्षण श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा दिया गया आशीर्वचन रहा। उन्होंने महर्षि दयानन्द के हिन्दी भाषा के प्रेम को उजागर करते हुए कहा कि उन्होंने गुजराती होते हुए भी आर्य समाज की स्थापना, वेदों के प्रचार एवं प्रसार का माध्यम हिन्दी भाषा को चुना। उन्होंने कहा कि राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का भी मानना था कि राष्ट्रभाषा या राजभाषा वही भाषा बन सकती जिसमें निम्नलिखित गुण हों–

जिसे देश के अधिकांश निवासी समझते हों, वह सरल हो, वह क्षणिक या अस्थाई हितों को ध्यान में रखकर न चुनी गई हो, उसके द्वारा देश का परस्पर धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवहार सम्भव हो सके और सरकारी कर्मचारी उसे सरलता से सीख सके। महात्मा गांधी जी का दृढ़ विश्वास था कि समस्त भारतीय भाषाओं में केवल हिन्दी ही ऐसी भाषा है जिसमें उपर्युक्त सभी गुण विद्यमान हैं। हिन्दी दिवस के अवसर पर जहां विविध प्रकार के कार्यक्रम आयोजित हों, वहां शासकीय, शैक्षणिक, व्यापारिक क्षेत्रों में हिन्दी के अधिक प्रयोग के विषय में चर्चा अनिवार्य रूप से होनी चाहिए।

बेविनार के मुख्य वक्ता डॉ. बलविन्द्र सिंह हिन्दी विभाग डी.ए.वी. कॉलेज जालन्धर रहे। अपने वक्तव्य में डॉ बलविन्द्र ने हिन्दी भाषा के अस्तित्व से आरम्भ करते हुए देश की वस्तुस्थिति में किसी भाषा के योगदान को चर्चा का विषय बनाया। हिन्दी भाषा की व्यवहारिकता की चर्चा करते हुए डॉ. बलविन्द्र ने कहा कि हिन्दी मात्र शास्त्रीय भाषा के पहरावे से निकल कर बाजार एवं व्यापार की भाषा बन गई है। बड़ी-बड़ी मल्टी नैशनल कम्पनियों में भी हिन्दी के विद्यार्थियों के लिए संभावनाएं हैं।

आज हिन्दी निरन्तर विश्व पटल पर अपना वर्चस्व कायम कर रही है। गूगल मीट पोर्टल पर चले इस बेविनार में सहयोगी संस्थाओं के विद्यार्थियों एवं प्राध्यापकों ने भी हिस्सा लिया। बेविनार में प्रबन्धकर्तृ समिति के प्रधान श्री विनोद भारद्वाज एवं सचिव श्री सतीश कुमार बरूटा की उपस्थिति विशेष सराहनीय रही। धन्यवाद ज्ञापन प्रधान श्री विनोद भारद्वाज जी द्वारा किया गया। अपने ज्ञापन में उन्होंने हिन्दी भाषा के उत्थान में आर्य समाज द्वारा दिये गए योगदान को भी स्मरण किया।

--प्रिंसीपल संजीव डाबर

आर्य कालेज लुधियाना में ऑनलाईन माध्यम से हिन्दी दिवस मनाया गया

आर्य कालेज लुधियाना में 14 सितम्बर को हिन्दी दिवस बड़ी धूमधाम से मनाया गया। इस अवसर पर आर्य कालेज लुधियाना की प्रिंसीपल डा. सविता उप्पल, प्रो. तेजिन्द्र कौर, प्रो. रेखा भनोट एवं प्रो. अशीश शर्मा ने सम्बोधित किया। इस अवसर पर स्कूल की विद्यार्थियों ने कविता उच्चारण भी किया।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की प्रमुख संस्था आर्य कॉलेज लुधियाना में 14 सितम्बर को ऑनलाईन हिन्दी दिवस मनाया गया, जिसमें हिन्दी भाषा के इतिहास एवं महत्व पर विचार चर्चा हुई। आर्य कॉलेज प्रबन्धकीय कमेटी की सचिव श्रीमती सतीशा शर्मा ने इस अवसर पर कहा कि हिन्दी भारत की राजभाषा है। प्रतिवर्ष हमारे देश में 14 सितम्बर को हिन्दी दिवस के रूप में मनाया जाता है क्योंकि 14 सितम्बर 1949 के दिन भारत की संविधान सभा ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किया था। स्वाधीनता के संघर्ष के समय हिन्दी के प्रचार को स्वराज्य प्राप्ति के समान ही महत्त्व दिया जाता रहा था और सभी स्वाधीन देश अपना राजकाज अपनी देश की भाषा में करते हैं। हिन्दी भाषा के बल पर रावलपिंडी से लेकर ढ़ाका तक स्वतन्त्रता आन्दोलन चला। आजादी के इस महाआन्दोलन में हिन्दी भाषा ने ही देश को जोड़ने का काम किया। आज भी देश के अधिकांश भागों में हिन्दी भाषा बोली और समझी जाती है। इसलिए 14 सितम्बर को संविधान का निर्णय राष्ट्र की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण था। इस महत्त्व के कारण इस दिवस को देश भर में विभिन्न संस्थाएं हिन्दी दिवस के रूप में मनाती हैं। इस भाषा के प्रचार-प्रसार में हम सब भारतवासियों को अपना योगदान देना चाहिए। इस अवसर पर बोलते हुए आर्य कॉलेज की प्रिंसिपल डॉ. सविता उप्पल ने कहा कि हिन्दी भाषा आज एक सशक्त भाषा बन चुकी है। इस अवसर पर कॉलेज की छात्राओं ने हिन्दी भाषा से सम्बन्धित कविताएं भी पेश की। आर्य कॉलेज की गर्ल्ज सैक्शन की प्रभारी प्रो. सूक्ष्म आहलूवालिया ने अपने वक्तव्य में हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार एवं उपयोग पर बल दिया। हिन्दी विभाग की डॉ. तजिंदर भाटिया ने कहा कि हिन्दी आज अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बना चुकी है। हिन्दी भाषा आज निरन्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। पूरे विश्व में हिन्दी को सम्मान की दृष्टि से देखा जा रहा है। इसलिए आज हमें भी अपने बोल-चाल, व्यवहार तथा दैनिक कार्यों में हिन्दी भाषा को प्रमुखता देनी चाहिए। संस्कृत विभाग के डॉ. आशीष कुमार ने भी हिन्दी भाषा के महत्व पर अपने विचार व्यक्त किए। उन्होंने हिन्दी दिवस समारोह में सभी उपस्थित महानुभावों का धन्यवाद किया।

-प्रिंसीपल डा. सविता उप्पल

स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की तरफ से मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक प्रेम भारद्वाज द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड़ जालन्धर पंजाब से मुद्रित एवं गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से प्रकाशित।
सम्पादक:-प्रेम भारद्वाज
पीआरबी एक्ट के तहत प्रकाशित सामग्री के चयन हेतु उत्तरदायी किसी विवाद का न्यायिक क्षेत्र जालन्धर होगा। आर एन आई संख्या 26281/74 **E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org**